खतरनाक गलत धारणाएँ: भारत के उदय पर चीनी नज़रिया
Dangerous Misperceptions: Chinese Views of India's Rise

मिनक्सिन पेई
Minxin Pei
May 23, 2011

वैश्विक शक्ति के रूप में भारत का तीव्र आर्थिक उत्कर्ष निश्चय ही एक ऐतिहासिक घटना है,जिससे आगामी दशकों में विश्व में शक्ति का संतुलन बदल जाएगा. इसकी लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था और निजी क्षेत्र की उद्यमशील गतिशीलता के कारण भारत के उदय का पश्चिम में भाव-भीना स्वागत हुआ है. भारत के उदय के पश्चिमी समर्थन और इसके लोकतांत्रिक राजनीतिक मॉडल की जड़ें गहन वैचारिक समानता, आपसी आर्थिक हितों और रणनीतिक विचारों पर आधारित हैं. महान् आर्थिक शक्ति के रूप में भारत के उदय से विकासशील दुनिया को एक वैकल्पिक, किंतु सशक्त मॉडल मिलेगा और चीन को मिलेगा संभावित रणनीतिक प्रतिद्वंद्वी.

परंतु चीन ने भारत के उदय का कुछ हिचकिचाहट के साथ ही स्वागत किया है. आम जनता के स्तर पर चीनी समाज के अधिसंख्यक लोगों का भारत के बारे में नज़रिया अज्ञान,घिसा-पिटा ढाँचा और अव्यक्त शत्रुता से जुड़ा है. भद्रलोक के स्तर पर जहाँ भारत में उसके प्रति रुचि तेज़ी से बढ़ रही है, वहीं भारत के संबंध में संभाषण के स्तर पर उनका गहन ध्रुवीकरण और राजनीतिकरण हो रहा है. इसके फलस्वरूप भारत के वर्तमान रूपांतरण के विश्लेषण की गुणवत्ता अपेक्षाकृत निम्न स्तर की है. सबसे अधिक चिंता की बात यह है कि सरकार से संबद्ध भद्रलोक महाशक्ति के रूप में भारत की क्षमता को संदेह की दृष्टि से देखता है और वह भारत की रणनीतिक जवाबी प्रतिद्वंद्विता की उस भूमिका को लेकर चिंतित है जिसे पश्चिम के देश चीन को संयमित करने के लिए इस्तेमाल कर सकते हैं. भारत की उपलब्धियों को कमतर समझकर आँकने और भूराजनीतिक प्रतिद्वंद्वी के रूप में भारत की भूमिका को बढ़ाचढ़ाकर पेश करने से खतरनाक स्वतः समर्थक गतिवाद की स्थिति पैदा हो सकती है जिससे भविष्य में चीन और भारत के बीच रणनीतिक प्रतियोगिता और भी बढ़ सकती है.

व्यापक अज्ञान और पूर्वाग्रह
भारत के बारे में चीन के प्रेस कवरेज के शीघ्र सर्वेक्षण से यह पता चलता है कि यह कवरेज मात्रा और गुणवत्ता दोनों ही दृष्टियों से सीमित है. चीन के सबसे महत्वपूर्ण आधिकारिक समाचार पत्र 'पीपुल्स डेली' नामक वेबसाइट पर भारत संबंधी लेखों की खोज से यह पता चला कि अप्रैल, 2011 के महीने में इस साइट से संबद्ध बड़े प्रकाशनों में भारत पर केवल पाँच लेख प्रकाशित किए गए थे. अप्रैल वही महीना है जब चीन में ब्रिक का तीसरा शिखर सम्मेलन आयोजित किया गया था, जिसमें भारत के प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी भाग लिया था. ऐसे समय में भारत के बारे में चीनी प्रेस की रुचि कुछ अधिक ही होनी चाहिए थी, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ.

आम चीनियों के मन में भारत के बारे में जानकारी न होने के कई कारण हो सकते हैं. प्रेस में सीमित कवरेज के अलावा एक औसत चीनी नागरिक पश्चिम को अपने मॉडल के रूप में देखता है और अगर भारत के बारे

में सोचता भी है तो भी उसकी छवि गतिशील और तेज़ी से विकसित होते हुए देश की न होकर एक गरीब, गड़बड़ी वाले और पिछड़े देश की ही होती है. दोनों समाजों के बीच व्यापक सामाजिक और सांस्कृतिक विनिमय कार्यक्रमों के अभाव में अज्ञान और घिसे-पिटे ढाँचे की इस छवि को और भी बल मिलता है. सन् 2008 में केवल 356,000 चीनी भारत आए थे, जबकि उसी वर्ष के दौरान मलेशिया जाने वाले चीनियों की संख्या एक मिलियन के आसपास थी. सन् 2010 में लगभग 380,000 भारतीय चीन गए थे, जबकि मंगोलिया से चीन आने वाले लोगों की संख्या भी इससे कहीं अधिक थी. चाइना ईस्टर्न एयरलाइन द्वारा बिना कहीं रुके केवल एक व्यावसायिक उड़ान ही दोनों देशों (नई दिल्ली और शंघाई के बीच) को जोड़ती है. महत्वपूर्ण बात तो यह है कि बीजिंग और नई दिल्ली के बीच कोई सीधी उड़ान नहीं है.

परस्पर विनिमय में पैदा होने वाली इस प्रकार की बाधाओं से निश्चय ही एकदूसरे के प्रति धारणाएँ भी बाधित होती हैं. सन् 2010 में हॉरिज़न रिसर्च नाम की एक नामी चीनी निजी बाज़ार अनुसंधान फ़र्म द्वारा जारी की गई मतगणना के अनुसार एक औसत चीनी नागरिक का भारत के प्रति नज़रिया एक भारतीय नागरिक के चीन के प्रति नज़रिये के मुकाबले कहीं अधिक नकारात्मक है. सर्वेक्षण के उत्तरदाताओं से पूछा गया था कि पच्चीस ऐसे देशों के नाम बताएँ जिनके लिए उनके मन में मैत्री भाव हो. जहाँ भारतीय उत्तररदाताओं का चीनियों के प्रति मैत्री भाव ‘‘औसत’’ पाया गया, वहीं चीनी उत्तररदाताओं का भारतीयों के प्रति मैत्री भाव ‘‘औसत’’ से भी कम पाया गया. केवल जापान ही ऐसा देश था, जिसके प्रति मैत्री भाव इससे भी कम पाया गया. चीनी उत्तररदाताओं का अमरीका, दक्षिण कोरिया और रूस के प्रति मैत्रीभाव सबसे अधिक पाया गया. इसी मतगणना से पता चला कि अधिकतर भारतीय चीन को अपना ‘‘भागीदार’’ मानते हैं, ‘‘विरोधी’’ नहीं, लेकिन चीनी उत्तररदाता अमरीका और जापान के बाद भारत को तीसरे खतरे के रूप में देखते हैं. लेकिन हाल ही के पिछले कुछ वर्षों में भारत को खतरे के रूप में देखने के नज़रिये में तेज़ी से गिरावट आने लगी है और सन् 2006 में पिछले वर्ष पूछे गए प्रश्न के उत्तर में केवल 9 प्रतिशत चीनी उत्तररदाताओं ने ही भारत को खतरा बताया.

इससे भी अधिक निराशाजनक बात यह है कि भारत के प्रति नकारात्मक भावना का मिलान भारत के आर्थिक महत्व को कम करके आँकने से भी हो रहा है. चीनी लोग ब्रिज देशों में अर्थात् ब्राज़ील, रूस, भारत और चीन में भारत को ही सबसे ‘‘कमज़ोर’’ देश मानते हैं. केवल 1 प्रतिशत ही आज भारत को सबसे मज़बूत ब्रिक मानते हैं. इसके विपरीत 70 प्रतिशत चीनी उत्तररदाता आज चीन को सबसे मज़बूत देश मानते हैं. भारत के बढ़ते प्रभाव को कम आँकने के कारण ही औसत चीनी नागरिक भारत को कोई बड़ा अंतर्राष्ट्रीय खिलाड़ी नहीं मानते. जब उनसे यह पूछा गया कि वे अगले पाँच से दस वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय मामलों में किस देश की अग्रणी भूमिका मानते हैं, तो 51 प्रतिशत ने चीन की भूमिका को ही सबसे अग्रणी माना, 36 प्रतिशत ने अमरीका की भूमिका को सबसे अग्रणी माना और केवल 0.2 प्रतिशत ने भारत की भूमिका को सबसे अग्रणी माना.

भद्रलोक के नज़रिये का ध्रुवीकरण और राजनीतिकरण

आम चीनी नागरिकों से ठीक विपरीत चीन के बुद्धिजीवियों,व्यापारियों और राजनीतिक भद्रलोक की उदीयमान भारत में रुचि बढ़ती जा रही है, क्योंकि वे चीन के लिए भारत के रणनीतिक महत्व को बखूबी समझते हैं. आर्थिक प्रतियोगिता के अलावा भारत तिब्बत के मामले में भी महत्वपूर्ण खिलाड़ी है और चीन के साथ भारत

का सीमा-विवाद अभी भी खत्म नहीं हुआ है. चीन के राष्ट्रीय सुरक्षा प्रतिष्ठान के लिए भारत की सैनिक शक्ति भी चिंता का विषय है. यह कहना अब अनावश्यक-सा ही है कि वाशिंगटन के साथ रणनीतिक भागीदारी होने के कारण चीनी रणनीतिकारों को यह भय सताने लगा है और वे यह समझने लगे हैं कि अमरीका चीन के विरुद्ध जवाबी संतुलन के लिए भारत का इस्तेमाल कर सकता है.

उदीयमान भारत को लेकर चीन में सबसे खतरनाक लड़ाई तो विचारों की दुनिया में लड़ी जा रही है. खास तौर पर यह लड़ाई इस बात को लेकर है कि भारत का लोकतांत्रिक और उद्यमिता का मॉडल चीन के निरंकुश स्थिर मॉडल की तुलना में अधिक अर्थक्षम है या नहीं. इस वाद-विवाद का ध्रुवीकरण चीनी भद्रलोक के अंदर ही वैचारिक बिंदुओं पर हो गया है. ज़ाहिर है कि उदारवादी लोग भारतीय मॉडल को तरजीह देते हैं और राष्ट्रवादी लोग न केवल भारतीय मॉडल को अस्वीकार कर देते हैं बल्कि इसे नीचा दिखाने की कोशिश भी करते हैं. दिलचस्प बात तो यह है कि आधिकारिक टिप्पणीकार भारतीय मॉडल की आलोचना से कतराते हैं, भले ही वे चीन की श्रेष्ठता के प्रमाण के रूप में गरीबी, कमज़ोर अवसंरचना और जाति-व्यवस्था जैसी भारत की कुछ जानी-मानी समस्याओं पर टिप्पणी करते नहीं थकते.

दूसरे शब्दों में चीनी भद्रलोक के बीच आपस में उदीयमान भारत के बजाय चीन के बारे में ही ज़्यादा चर्चा होती है. उदारवादी चीनियों के लिए भारत का लोकतांत्रिक लचीलापन,आर्थिक गतिशीलता, सामाजिक और सांस्कृतिक बहुलता और गरीबों व वंचितों का संरक्षण चीन के एकदलीय शासन,स्थिर आर्थिक नीतियों और सत्ता के आधिकारिक दुरुपयोग के ठीक विपरीत है. वे उदीयमान भारत का उदाहरण देकर चीनी मॉडल की भर्त्सना करते हैं और भारतीय मॉडल की स्थिरता के मुख्य स्रोत के रूप में भारत की आधारभूत स्थिरता और राजनीतिक जवाबदेही पर अधिक ज़ोर देते हैं.

वाद-विवाद के दूसरी ओर हैं, अनुदारवादी चीनी राष्ट्रवादी लोग. उनका ध्यान भारतीय समाज, अर्थव्यवस्था और राजनीति के नकारात्मक पहलुओं पर ही टिका रहता है, जैसे, जाति-व्यवस्था, कमज़ोर अवसंरचना, गरीबी,भ्रष्टाचार और निकम्मी सरकार. वे इस बात को सिरे से नकार देते हैं कि भारत कभी चीन से आगे भी निकल सकता है और एक वैकल्पिक मॉडल भी बन सकता है. वे भारत के प्रति सकारात्मक रुख अपनाने के पीछे पश्चिम के चीन-विरोधी ‘‘साजिश के सिद्धांत’’ को देखते हैं.

इस सब के बीच भारत को लेकर आधिकारिक टिप्पणी होती है. अपनी संयमित टिप्पणी के साथ-साथ एक ऐसा प्रयास भी होता है,जिसमें चीन के शानदार म़ॉडल के बचाव में टिप्पणी की जाती है. इस प्रयास में चीनी शासन की तथाकथित ‘‘प्रणालीगत शक्ति’’ निहित होती है, जिसमें उसकी गतिशीलता की क्षमता और चीनी समाज के तीव्र रूपांतरण की क्षमता पर ज़ोर रहता है. भारत की आलोचना कुछ खास नीतियों को लेकर नहीं होती,बल्कि लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था की बुनियादी कमज़ोरी की आलोचना होती है, जिसके कारण दलगत राजनीति,सरकारी निकम्मापन और राजनीतिक गतिरोध पैदा होता है.

अगर साफ़-साफ़ कहा जाए तो कहा जा सकता है कि चीनी भद्रलोक के बीच उदीयमान भारत को लेकर बढ़ती रुचि में भी कोई खास बात नहीं है. उनमें से बहुत कम लोग भारत आए हैं. चीनी अकादमिक विद्वानों की भी

समकालीन भारत को लेकर समझ बहुत गहरी नहीं है, जैसी कि अमरीका, जापान और रूस जैसी अन्य महाशक्तियों के विद्वानों की है. यह प्रमाण प्रभाववादी और सतही लगता है.

कुछ करने का आवाहन

चीनी अज्ञान, पूर्वाग्रह और गलत धारणाएँ भले ही अच्छी नहीं लगतीं, लेकिन इससे बेहद नुक्सान हो सकता है. दुर्भाग्यवश, रणनीतिक अविश्वास की भावना के साथ मिलकर ये धारणाएँ दीर्घकालीन शत्रुता और प्रतिद्वंद्विता के साथ राजनीतिक गतिवाद को और भी मज़बूत करेंगी. इस समय आम लोगों और भद्रलोक का नज़रिया यही बनता जा रहा है कि भारत चीन की प्रगति को रोकने के लिए अमरीका के रणनीतिक ढाँचे का एक अंग बनता जा रहा है. पिछले कुछ वर्षों में भारत और चीन के बीच बढ़ते तनाव से कुछ हद तक रणनीतिक अविश्वास की आंतरिक भावना को बल मिलता रहा है.

अभी बहुत देर नहीं हुई है. इसलिए ऐसे खतरनाक गतिवाद को बढ़ने से रोका जाना चाहिए. एशिया की दो महाशक्तियों के बीच शत्रुतापूर्ण प्रतिद्वंद्विता शांतिपूर्ण तरीके से उनके आर्थिक विकास की आकांक्षाओं को पटरी से उतार देगा. चीन, भारत और अमरीका के चीनी और भारतीय विद्वान् समुदायों को यह प्रयास करना चाहिए कि ऐसी त्रासदी को वास्तविक रूप में परिणत होने से पहले ही रोक लिया जाए. कम से कम वे यह तो कर ही सकते हैं कि दोनों देशों के बीच विद्वानों के परस्पर विनिमय से इस धारणा को पनपने से रोकने का प्रयास साफ़गोई और ईमानदारी से किया जाए

मिनक्सिन पेई क्लेरेमॉन्ट मैक्केना कॉलेज में शासन के प्रोफ़ेसर हैं और चाइनाज़ ट्रैप्ड ट्रांज़िशनः द लिमिट्स ऑफ़ डिवलपमेंटल ऑटोक्रेसी (हॉर्वर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, 2006*) के लेखक हैं.*

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा),रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@hotmail.com>